International Journal of Applied Research 2016; 2(4): 754-756

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(4): 754-756
www.allresearchjournal.com
Received: 27-01-2016
Accepted: 13-03-2016

डॉ. नन्दकिशोर ठाकुर
मध्य विद्यालय प्रखण्ड कॉलोनी,
नाथनगर, भागलपुर, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. नन्दकिशोर ठाकुर
मध्य विद्यालय प्रखण्ड कॉलोनी,
नाथनगर, भागलपुर, बिहार, भारत

मम्मट के काव्यप्रयोजन का स्वरुप

डॉ. नन्दकिशोर ठाकुर

प्रस्तावना

काव्यप्रयोजन का अर्थ होता है– काव्य निर्माण का उद्देश्य। काव्य के आधार पर हमें जो प्राप्त होता है, उसे ही साहित्य प्रयोजन कहा जाता है। प्रत्येक कर्म का कोई न कोई प्रयोजन होता है। बिना प्रयोजन कोई भी व्यक्ति किसी कार्य में प्रवृत्त नहीं होता है। जबतक किसी शास्त्र या कर्म का कोई प्रयोजन नहीं होता है तब तक उसे कोई भी स्वीकार नहीं करता है–

"प्रयोजनमनुद्दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते।"

सर्वप्रथम आचार्य भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में प्रयोजनों का उल्लेख किया है। उन्होंने बताया कि नाट्य दुःखार्त, श्रमार्त, शोकार्त तथा तपस्वियों को विश्रान्ति प्रदान करता है। आचार्य के अनुसार–

"दुःर्खातानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।।
विश्रान्तिजननं काले नाट्यमेतद् भविष्यति।।" [1]

आचार्य भामह ने अपने काव्यालङ्कार ग्रन्थ में दो बिन्दुओं को आधार मानकर काव्यप्रयोजन की चर्चा करते हैं। आचार्य ने कवि और सहृदयपाठक दोनों की दृष्टि से काव्यप्रयोजन बताया है। कीर्ति प्राप्ति तथा काव्य निर्माण जनित आनन्द की प्राप्ति कवि को होती है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष एवं कला विषयक निपुणता और काव्य रसास्वादन जनित प्रीति सहृदय पाठक को होती है। सत्काव्य प्रणयन करने वाले स्वर्ग भी चले जाते हैं तब भी उनका मनोहर काव्यमय शरीर यहाँ निरातङ्क रहता है। अतः जब तक पृथ्वी है तब तक स्थिर कीर्ति की इच्छा रखने वाले को काव्य निर्माण करना चाहिए। आचार्य भामह के अनुसार–

"धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधुकाव्यनिबन्धनम्।।" [2]

आचार्य आनन्दवर्धन आनन्द की प्राप्ति को ही काव्य का प्रयोजन मानते हैं। अर्थात् सहृदयमनः प्रीति ही काव्यप्रयोजन है। वे ध्वनि सिद्धान्त का निरुपण सहृदय के आनन्द के लिए करते हैं। आचार्य आनन्दवर्धनानुसार–

"तेन ब्रूमः सहृदयमनः प्रीतये तत्स्वरूपम्।" [3]

आचार्य अभिनवगुप्त, कुन्तक आदि आचार्यों ने भी काव्यप्रयोजनों पर अपने–अपने विचार व्यक्त किये हैं। इन सभी में आचार्य मम्मट का दृष्टिकोण समन्वयवादी रहा है।

प्रस्तुत लघु शोध निबंध **"काव्यप्रकाश में मम्मट का काव्य प्रयोजन"** इस शीर्षक को संक्षेप में निरूपित किया जायेगा, जो मात्र संकेत के रूप में दिग्दर्शन कराता है। लक्षणग्रन्थशिरोमणि 'काव्य प्रकाश' में वाग्देवतावतार आचार्य मम्मट ने काव्यप्रयोजन को बहुत ही सरल और सरस रुप में विश्लेषित किया है। आचार्य मम्मट के अनुसार काव्यप्रकाश में काव्य के छः प्रयोजन हैं–

"काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।।" [4]

अर्थात् मम्मट ने काव्य को प्रयोजन सहित बताया है। उन्होंने कहा है कि काव्य यश की प्राप्ति के लिए, धन के उपार्जन के लिए, व्यवहार ज्ञान के लिए, अमङ्गल निवारण (नाश) के लिए, तुरन्त ही परमानन्द की प्राप्ति के लिए तथा प्रियतमा के समान उपदेश देने के लिए होता है। कारिका– ''कालिदासादीनामिव यशः, श्रीहर्षदिर्घावकादीनामिव धनम्, राजादिगतोचिताचारपरिज्ञानम्, आदित्यादेर्मयूरादीनामिवानर्थ– निवारणम्, सकलप्रयोजनमौलिभूतं समनन्तरमेव रसास्वादन–समुद्भूतं विगलितवेद्यान्तरमानन्दम्, प्रभुसम्मितशब्दप्रधानवेदादिशास्त्रेभ्यः
सुहृत्सम्मितार्थतात्पर्यवत्पुराणादीतिहासेभ्यश्च शब्दार्थयोर्गुणभावेन रसाङ्गभूतव्यापारप्रवणतया विलक्षणं यत्काव्यं लोकोत्तरवर्णनानिपुणं कविकर्म तत् कान्तेव सरसतापादनेनाभिमुखीकृत्य रामादिवद्वर्तितव्यं न रावणादिवदित्युपदेशं च यथायोगं कवेः सहृदयस्य च करोतीति सर्वथा तत्र यतनीयम्।'' [5]
आचार्य मम्मट ने काव्यप्रयोजन के छः बिन्दुओं को इस प्रकार विश्लेषित किया है–

(1) काव्यं यशसे :– आचार्य मम्मट के अनुसार काव्य यश के लिए होता है। काव्य निर्माण से कवि की कीर्ति का प्रसार होता है। इसी प्रकार से कवि कुलगुरुकालिदास ने काव्य के द्वारा ही यश को प्राप्त किया था। दण्डी, भारवि तथा बाण ने काव्य के द्वारा ही कीर्ति प्राप्त की। [6] विशेषतः कालिदास ने अपने सात रचनाओं के निर्माण से काफी यश को प्राप्त किया।

(2) अर्थकृते :– आचार्य मम्मट के अनुसार काव्य धन–प्राप्ति के लिए होता है। कविजन काव्य रचना करके धनोपार्जन करते हैं। यह लोक प्रसिद्ध है कि धावक नामक कवि ने महाराज हर्ष के नाम से 'रत्नावली' नाटिका लिखी और प्रचुर धन–राशि प्राप्त की। [7] वस्तुतः रत्नावली नाटिका को धावक कवि ने लिखा लेकिन राजा हर्ष ने प्रचुर धन देकर उस कवि को सम्मानित तथा पुरस्कृत किया। इसलिए कवि ने रत्नावली से अपना नाम हटाकर प्रणेता के स्थान पर राजा हर्ष का ही नामोल्लेख किया। इस प्रकार 'रत्नावली' नाटिका से धावक को केवल धन की प्राप्ति हुई, यश की प्राप्ति जितनी होनी चाहिए थी उतनी नहीं हुई।

(3) व्यवहारविदे :– काव्य व्यवहार ज्ञान के लिए होता है। रामायण आदि काव्यों के अनुशीलन से पिता–पुत्र, भाई–भाई आदि के उचित आचरण का ज्ञान होता है। [8] भरतमुनि, भामह, कुन्तक आदि आचार्यों ने भी इस प्रयोजन का प्रतिपादन किया है। यह पाठक निष्ठ प्रयोजन है। यह प्रयोजन जीवन के वास्तविक सत्य को पहचानने के लिए नई दृष्टि प्रदान करता है। वह अपने भौतिक यथार्थ का साक्षात्कार भी कराता है। काव्य–नाटक आदि में जो चरित्र–चित्रण होता है उससे भिन्न–भिन्न स्थितियों में पात्रों के परस्पर व्यवहार की शैली का परिज्ञान होता है। विशेषकर राजा आदि के साथ किस प्रकार का शिष्टाचार व्यवहार में लाना चाहिए, इस बात का संज्ञान काव्यादि के द्वारा साधारणजनों को प्राप्त होता है। लोगों को राम आदि के समान व्यवहार करना चाहिए न कि रावण के समान– **''रामादिवत् प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत्।''**

(4) शिवेतरक्षतये :– शिव का अर्थ है– कल्याण या मङ्गल। काव्य अमङ्गल के निवारण के लिए भी होता है। यहाँ मम्मटाचार्य ने मयूर कवि की कथा की ओर संकेत किया है। मयूर कवि राजा हर्षवर्धन के राजसभा का रत्न था। परम्परानुसार महाकवि बाण इनका सम्बन्धी और मित्र था। एकबार बाण की पत्नी किसी कारणवश उनसे रूठ गयी थी, जिसे मनाने के लिए बाण बार–बार प्रयास कर रहे थे लेकिन सफलता नहीं मिली। तभी कवि मयूर बाण की पत्नी के मान–मनौवल में अचानक दखल दे दिया। फलतः बाण की पत्नी ने क्रोध में आकर कवि मयूर को कुष्ठी होने का शाप दे दिया। तत्पश्चात् उसके पातिव्रत्य के प्रभाव से मयूर कवि पर शाप का प्रभाव पड़ा और वे कुष्ठी हो गये। क्रोध शान्ति के पश्चात् उसी ने उनको शाप से मुक्त होने के लिए गंगा के किनारे जाकर भगवान् सूर्य की उपासना करने का उपदेश दिया। कुष्ठ रोग से आक्रान्त होकर मयूर ने 'सूर्यशतकम्' के श्लोकों से सूर्य भगवान् की स्तुति की और इससे प्रसन्न होकर सूर्य भगवान् ने उसे कुष्ठ रोग से मुक्त कर दिया। [9] अतएव काव्य का निर्माण अमङ्गल नाश के लिए होता है। वर्तमान समय में अमङ्गल नाश के लिए ही लोग हनुमानपाठ, दुर्गापाठ, महामृत्युञ्जय जाप आदि करते हैं।

(5) सद्यः परनिर्वृतये :– आचार्य मम्मट ने कहा है कि अलौकिक आनंद की अनुभूति की काव्य का मुख्य प्रयोजन है। यह आनन्द काव्य के रसास्वादन से उत्पन्न होता है। इस अलौकिक आनन्दानुभूति के समय लोगों को अन्य ज्ञेय वस्तुओं का ज्ञान नहीं रहता है। इसलिए इस आनन्द को ब्रह्मानन्द सहोदर कहा गया है। [10] काव्यानंद को ही ब्रह्मानन्द सहोदर कहा गया है। सृजनात्मकता का आनन्द भौतिक सुखानुभूति से नितान्त भिन्न होता है। इसलिए उसे अलौकिक आनन्द भी कहा जाता है। इसे भी लगभग सभी संस्कृत आचार्यों ने काव्य का प्रयोजन माना है।

(6) कान्तासम्मिततयोपदेश युजे :– काव्यप्रकाशकार आचार्य मम्मट ने इसे लेखकनिष्ठ प्रयोजन माना है। ग्रन्थकार ने इस छठे काव्य प्रयोजन की व्याख्या करते हुए कहा है कि काव्य को प्रभुतुल्य, मित्रतुल्य नहीं, अपितु कान्तातुल्य प्रेरक होना चाहिए।

प्रभुतुल्य – वेद–शास्त्रों का उपदेश राजा या स्वामी की आज्ञा के समान है। उसमें शब्द की प्रधानता होती है। जिस प्रकार कोई स्वामी सेवक को ''तुम ऐसा करो'' यह आदेश देकर किसी कार्य में नियुक्त करता है। उसी प्रकार वेदशास्त्र भी विशेष फल रहित सन्ध्यावन्दनादि में मनुष्य को प्रवृत्त कर देते है। [11] राजाज्ञाऐं तथा राजकीय विधान सदा शब्दप्रधान होता है। इसमें जो कुछ आदेश दिया जाता है, उसका अक्षरशः पालन अनिवार्य है। इसी प्रकार वेद–शास्त्र आदि में जो उपदेश दिये गये हैं उनका अक्षरशः पालन करना ही अभीष्ट होता है।

मित्रतुल्य – पुराण–इतिहास आदि का उपदेश मित्रतुल्य है। इसमें अर्थ पर विशेष बल दिया जाता है। इसलिए इसका अक्षरशः पालन आवश्यक नहीं होता है, अपितु उनके अभिप्राय का अनुसरण किया जाता है। मित्र अपने मित्र को उचित कार्य का अनुष्ठान करने तथा अनुचित काम का परित्याग करने का उपदेश देता है, परन्तु उसका उपदेश राजा के आज्ञा के समान शब्दप्रधान नहीं होता है। उसका तात्पर्य अर्थ में होता है। इसलिए अर्थ में तात्पर्य रखने वाली इस दूसरे प्रकार की उपदेश शैली को ग्रन्थकार ने 'मित्रतुल्य' शैली कहा है। इतिहास–पुराण आदि का अन्तर्भाव इसी शैली के अन्तर्गत होता है।

कान्तातुल्य – काव्य की उपदेश शैली में न शब्द की प्रधानता होती है और न ही अर्थ की। यहाँ शब्द तथा अर्थ दोनों का गुणीभाव होकर केवल रस की प्रधानता होती है। इसमें पत्नी के समान मधुर उपदेश देना काव्य का प्रयोजन है। जिस प्रकार पत्नी का उपदेश सीधा न होकर मधुर भाषा में तथा प्रच्छन्न रूप में होता है, उसी प्रकार काव्य का भी उपदेश मधुर और रसयुक्त होता है। मध्यकालीन एवं अन्य सन्तों की रचनाएँ भी इसी श्रेणी में आती है। अतएव काव्य का प्रयोजन कान्ता के उपदेश के समान मधुर एवं सरस होना चाहिए।
मम्मट के उत्तरवर्ती प्रमुख आचार्य विद्याधर ने भी अपने पूर्ववर्ती आचार्यों के मतों का अनुसरण किया है, जिसमें मूलतः आचार्य मम्मट के मत से साम्य है परन्तु उनके काव्य प्रयोजन में तो

व्यापक दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। मूलतः वही उनकी विशिष्टता को भी प्रदर्शित करता है। आचार्य विद्याधर ने जिस प्रकार कीर्ति, सम्पत्ति, पापक्षय, अतिशय आनन्द, परम चतुर्दिक आनन्द तथा चित्त के शान्तिपरक स्वरूप को काव्य का प्रयोजन स्वीकार किया है, वह निश्चय ही अन्य आचार्यों से विशिष्ट तथा व्यापक दृष्टि का परिचायक है क्योंकि अधिकांश आचार्य के मत में इनके कुछ न कुछ बिन्दु को काव्य प्रयोजन के रूप में स्वीकार किया गया है।

इसके अतिरिक्त अन्य उत्तरवर्ती प्रमुख आचार्यों ने भी काव्य प्रयोजन का विश्लेषण अपने–अपने ढंग से किया है जिसमें पंडित राज जगन्नाथ, विद्यानाथ, विश्वनाथ कविराज, केशव मिश्र, रूपगोस्वामी, राजानक रुय्यक आदि प्रमुख हैं।

काव्य प्रयोजन के सम्बन्ध में संस्कृत आचार्यों के अतिरिक्त हिन्दी एवं अन्य भाषा के कवियों ने भी अपना विचार प्रस्तुत किया है। गोस्वामी तुलसीदास ने स्वान्तःसुख के लिए ही श्रीरामचरितमानस की रचना की– **''स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा''।** आचार्य देव केवल यश को ही काव्य प्रयोजन मानते हुए कहते हैं–

''ऊँच नीच अरु कर्म बस, चलो जात संसार।
रहत भव्य भगवंत जस, नव्य काव्य सुख सार।।''

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कवि का प्रयोजन काव्य की सर्जना करने में रहता है और पाठक या श्रोता का प्रयोजन काव्य को पढ़ने या सुनने में रहता है। इन दोनों को ही काव्यानन्दानुभूति होती है। काव्य प्रयोजन का विश्लेषण सभी आचार्यों ने अपनी–अपनी मति से किया है, जिसमें वास्तविक पूर्णता का बोध स्पष्ट नहीं होता है किन्तु आचार्य मम्मट ने काव्य प्रयोजन के छः बिन्दुओं को पूरी स्पष्टता के साथ समन्वित कर दिया है। आचार्य मम्मट द्वारा प्रतिपादित काव्य प्रयोजन सम्पूर्ण, सुग्राह्य एवं कालजयी माना जा सकता है।

संदर्भ सूचीः

1. नाट्यशास्त्र– 1.144
2. काव्यालङ्कार– 1/2
3. ध्वन्यालोक– 1.1
4. काव्य प्रकाश प्रथम उल्लास, कारिका– 2, पृ.– 6
5. वहीं, पृ.– 10–11
6. वही, पृ.– 12
7. वही, पृ.– 12
8. वही, पृ.– 12
9. वही, पृ.– 13
10. वही, पृ.– 12
11. वही, पृ.– 11–12